Patliputra Journal of Indology
ISSN 2320-961x

महर्षि अरविन्द घोष की दार्शनिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक विचारधारा का विश्लेषणात्मक अध्ययन

शोधकर्ता
मधु बनी ट्रीजा
शिक्षा विभाग आईएफटीएम विश्वविद्यालय मुरादाबाद

निर्देशिका
डॉ. राजकुमारी सिंह
डीन एवं डायरेक्टर
शिक्षा विभाग आईएफटीएम विश्वविद्यालय मुरादाबाद

सारांश - महान योगी एवं दार्शनिक महर्षि अरविन्द घोष का जन्म 15 अगस्त 1872 ई० मे बगाल के कोन्नगर गाँव मे हुआ था। अरविन्द जी ने बन्देमातरम, कर्मयोगिन तथा धर्म आदि समाचार पत्रो एवं प्रभावशाली भाषाओ के द्वारा देश मे राष्ट्रीयता की भावना को जाग्रत किया तथा भारत का लक्ष्य का स्वराज्य घोषित किया। श्री अरविन्द घोष की आध्यात्मिकता अभिन्नताओं के कारण एक जैसी थी। श्री अरविन्द घोष का लक्ष्य केवल दुनिया मे परमात्मा की इच्छा को सम्पन्न करना, एक आध्यात्मिक परिवर्तन लागू करना, मानसिक, मार्मिक, भौतिक जगत, मानव जीवन मे दिव्यशक्ति और दिव्य आत्मा को लाना था।

की- वर्ड्स - आध्यात्मिक, प्रकाशित, कृत्रिम, क्रान्तिकारी आन्दोलन, कर्मयोगिन।

महर्षि अरविन्द घोष की समन्वित शिक्षा –

श्री अरविन्द के अनुसार जीव की आत्मा में ज्ञान सदा सुषुप्तावस्था मे गुप्त रहता है। शिक्षा का आधार या वाहन अथवा यन्त्र अन्तःकरण है। अतः अन्तःकरण की संरचना पर उन्होने गम्भीर विचार किया है। उनके अनुसार अन्तःकरण के चार पटल होते हैं –

1. चित्त जो अन्य तीन पटलो का आधार है। जब हम कोई बात याद करते हैं तो वह छनकर चित्त में एकत्र होती है। यह भूतकालिक मानसिक संस्कार है।
2. मानव इसमें अन्य पटल एकत्र होते हैं और इसे ही दर्शन की भाषा मे मस्तिष्क कहा जाता है इसका कार्य ज्ञानेन्द्रियों में प्रत्ययों को ग्रहण करना और उसे विचारो मे परिणत करना है । शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध सम्बन्धी सूचना ज्ञानेन्द्रियों से प्राप्त होती है।
3. बुद्धि मस्तिष्क जिस ज्ञान को प्राप्त करता है उसे व्यवस्थित करने का वास्तविक यन्त्र बुद्धि है। यह विचार शक्ति का पटल है। शिक्षण के लिये बुद्धि का सर्वाधिक महत्व है। इसमें रचनात्मक, विश्लेषणात्मक, संश्लेषणात्मक एवं आलोचनात्मक शक्तियाँ निहित होती हैं।
4. सत्य के अन्तर्द्रष्टिपरक प्रत्याक्षीकरण की शक्ति - इसमें ज्ञान का प्रत्यक्ष दर्शन होता है और इसके आधार पर व्यक्ति भविष्य कथन करने में समर्थ होता है। मस्तिक की यह शक्ति अभी पूर्णता को नही प्राप्त कर सकी। यह विकास की अवस्था मे है। किन्तु मानव के अन्तःकरण में यह शक्ति है अवश्य और यदि इस दुर्लभ शक्ति का विकास किया जाय तो मानव की अनेक समस्याओं का समाधान मिल जाए। मानव की तार्किक बुद्धि अपनी चंचलता एवं पक्षपातपूर्णता के कारण इस शक्ति को विकृत कर देती है। इस शक्ति के विकास में अभी तक बहुत कम ध्यान दिया गया है अतः शिक्षकों को इस ओर ध्यान देना आवश्यक है।

श्री अरविन्द घोष की पूर्ण योग साधना -

भारतीय साधन प्रणाली के कितने ही अंग है, जिनमे योग - मार्ग बहुत ऊँचा माना गया है। भक्ति, पूजा, उपासना, भजन, तप आदि विधियों का तो साधारण श्रेणी के मनुष्य भी पालन कर सकते है, पर योग की आरम्भिक साधना भी काफी कठिन मानी जाती है। उसे वे लोग ही कर सकते है जिनमे आध्यात्मिकता का कुछ अंश है और त्याग और तपस्या मे जिनको अनुराग है।

योग का वास्तविक आशय है जीव का भगवान के साथ एकत्व प्राप्त करने की चेष्टा करना अथवा यो कह सकते है कि आत्मा और परमात्मा का उपयोग ही योग-साधना का सर्वोच्च लक्ष्य है। इसके लिए विभिन्न महात्माओ ने अनेक प्रकार की योग शक्तियो का अविष्कार किया है, जो आज कल हमारे देश मे प्रचलित है। इनमे हठयोग, राजयोग, शक्तियोग, कर्मयोग और ज्ञानयोग का नाम अधिक प्रसिद्ध है। जपयोग और लययोग को भी महत्वपूर्ण माना गया है। इन पर समस्त योगों की साधना में मनुष्य को अपने साधारण रहन-सहन मे विशेष परिवर्तन करना पड़ता है और

ISSN: 2320-361x

जीवन के कुछ अंगों का दमन और कुछ का अधिकाधिक विकास करना पड़ता है। उदाहरण के लिये हठयोग की साधना में षट्कर्म जैसी प्रक्रिति के साधारण नियमों से भिन्न और कठिन विधियों से काम लेना पड़ता है और आसन-प्राणायाम आदि का विशेष रूप से भी अभ्यास करना पड़ता है। राजयोग में भी लगातार घंटों तक ध्यान करते रहना और सांसारिक व्यवहारों से अपने को बहुत कुछ हटा लेना आवश्यक होता है। इन सब बातों का सारांश यही है कि अब तक योग के जो स्वरूप लोगों में प्रचलित हैं, उसे साधारण जीवन यापन से बहुत भिन्न समझा जाता है, और जो लोग उस मार्ग को ग्रहण करते हैं वे प्रायः गृहस्थ जीवन का त्याग कर देते हैं। इससे अब कुछ नवीन संत पुरुषों ने योग की ऐसी विधियों का प्रचार आरम्भ किया है जिनकी साधना सांसारिक -जीवन का पालन करते हुये ही भली प्रकार से की जा सके और जिससे काफी ऊँचे आध्यात्मिक स्तरों पर भी पहुँचा जा सके। ऐसे योग- प्रचारकों में श्री अरविन्द घोष जी का नाम बहुत अधिक प्रसिद्ध है, उन्होंने वर्षों के अध्ययन और अभ्यास से अपने लिये को जिस "पूर्णयोग" का उपदेश दिया उससे उपयुक्त उद्देश्य भली प्रकार पूरा हो जाता है। इस सम्बन्ध में इस योग का अभ्यास करने वाले एक लेखक का कथन है - "पूर्णयोग वह सर्वांग साधन प्रणाली है जिसे सांसारिक जीवन और आध्यात्मिक जीवन के बीच सर्व विजयी सामंजस्य स्थापित हो सके, अर्थात जीवन को बिना खोए भगवान् को प्राप्त करना मानव जीवन के भीतर भगवान् और प्रकृति का पुनर्मिलन साधित करना। इसमें "पूर्ण" शब्द ही यह सूचित करता है कि यह योग मनुष्य को पूर्णत्व प्राप्त कराता है अर्थात यह आत्मा के भीतर जीवन को पूर्णत्व प्रदान करता है, सार्थक बनाता है। यह जीवन के किसी भी भाग को चाहे व शरीर, प्राण या मन किसी से सम्बन्ध रखने वाला क्यों न हो, त्याग नहीं करता। इसका उद्देश्य यह है कि मनुष्य के अन्दर निहित भगवत सत्ता के दृढ़ आधार के ऊपर समाज का एक महान भवन निर्मित किया जाए। वेदान्त सिद्धान्त पर आधार रखने वाले योगों का उद्देश्य होता है आत्मा के अन्दर जीवन को लय कर देना पर "पूर्णयोग" की विशेषता यह है कि वह आत्मा के भीतर से जीवन को प्राप्त कराता है। पुराने ढ़ग से सभी योग प्रायः "आत्म केन्द्रित" थे, सांसारिक जीवन से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था, वे केवल परलोक से ही सम्बन्ध रखते थे। वे इस गतिशील जगत को स्वप्न और माया समझ कर इससे दूर ही रहे, और निराकार ब्रह्म में अपनी आत्मा को मुक्ति प्राप्त करने की चेष्टा में ही लगे रहे। उन्होंने समाधि को ही सबसे अधिक महत्व प्रदान किया और मन एकदम स्थिर बना कर अथवा यों कहे कि मारकर ही शारीरिक चेतना को शांत बनाने की चेष्टा है।

'पूर्णयोग' भी आत्मा और परमात्मा में भेद की भावना को तो मिटाना चाहता है, परन्तु वह केवल अपनी आत्मा की मुक्ति के लिए ही प्रयास नहीं करता वरन विश्वात्मा भगवान् के अन्दर समस्त मानव समाज को पूर्णत्व प्रदान कराना चहाता है। वह अपनी स्वार्थ युक्त मुक्ति के लिए नहीं वरन मानवता के भीतर भगवान की अभिव्यक्ति के लिए चेष्टा करता है। यह जीवन के अन्दर आदर्श और वास्तविकता को एक बना देना चाहता है। संक्षेप में यह कह सकते हैं कि यह जीवन को भगवानमय दिव्य बनाता है और पृथ्वी को स्वर्ग में रूपातरित करता है।

पूर्णयोग की साधना प्रणाली का विचार करते हैं तो हमको निम्नलिखित बातों का ध्यान देना आवश्यक जानना पड़ता है -

1. शुद्ध मन से आत्मोत्सर्ग की भावना,
2. अपनी सत्ता के प्रत्येक अंश का सच्चाई के साथ पूर्ण समर्पण,
3. भगवान् की इच्छा के सामने अपने सब कर्मों और सर्वस्व को उत्सर्ग कर देना,
4. अंहकार, अभिमान, द्वेष, कामना, वासना आदि प्रकृति के समस्त दोषों को त्याग कर भगवान् द्वारा किये जाने वाले रूपान्तर को तैयार होना,
5. प्राणों की शुद्धि,
6. मन की प्रकाशमय एकाग्रता,
7. प्राणों का सौन्दर्य और सामंजस्य,

योग का अर्थ यही है कि आत्मा को पहचाना जाए, परिपूर्ण बनाया जाए, आत्मा विस्तार किया जाए और विश्वात्मा भगवान् के भीतर आत्मा को विकसित बनाया जाए। अपने आपको भगवान् की इच्छा के समुख सदा सुख और नमनशील रखो। तुम यह समझ लो भगवान् की शक्ति ही तुमसे काम करा रही है, तुम उनका एक यन्त्र हो और उसकी इच्छा अनुसार कार्य करना तुम्हारा कर्तव्य है। कर्मफल की कामना का त्याग करो। यह विश्वास करके की भगवान् समस्त पदार्थों में आत्मा के रूप में व्याप्त हैं और ज्ञानपूर्वक सबसे प्रेम करो। ऐसा करने से भगवान् की शक्ति तुमको "अतिमानस स्तर" (मनुष्य की वर्तमान अवस्था से उच्चा आत्म शक्तियुक्त दर्जा) पर पहुचा देगी। वहां पहुंचकर ही तुम आत्मा और जड़ तत्व को विश्वात्मिकता सत्ता के अन्दर एक साथ मिल सकते हो।

परन्तु एक विषय में तुमको सदा सावधान रहना होगा कि योग का उद्देश्य तुम्हारी व्यक्तिगत मुक्ति नहीं है, वरन इसका उद्देश्य मनुष्य मात्र के अन्दर भगवान् की अभिव्यक्ति करना है। तुम तो केवल उसके एक केंद्र एक यन्त्र हो।

वर्तमान शिक्षा पद्धति से असन्तोष –

प्रत्येक दार्शनिक अंततः एक शिक्षाविद होता है क्योंकि शिक्षा, दर्शन का क्रियात्मक पक्ष है। जैसा कि अभी हम देख चुके हैं- अरविन्द के दर्शन की चरम परिणति उनके शिक्षा दर्शन में हुई है। वे वर्तमान शिक्षा पद्धति से असंतुष्ट थे उनका कहना था-"सूचनात्मक ज्ञान कुशाग्र बुद्धि का

[illegible] नहीं हो सकता" तब ज्ञान तो नवीन अनुसंधान तथा भावी क्रियाकलापों का आरम्भ मात्र होता है। वे आज की शिक्षा पद्धति में भारतीय [illegible] की तीन विशेषताओं, आध्यात्मिकता,सर्जनात्मकता तथा बुद्धिमत्ता का ह्रास एवं पतन देखते थे। इस पतन का कारण वे इस अराष्ट्रीयकरण मानते थे।

श्री अरविन्द की शिक्षा पद्धति की संकल्पना – श्री अरविन्द जी इस प्रकार की शिक्षा पद्धति चाहते थे जो विद्यार्थी के ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार करे, जो विद्यार्थियों की स्मृति, चिंतन शक्ति एवं सर्जनात्मक क्षमता का विकास करे तथा जिसका माध्यम मातृभाषा हो। श्री अरविन्द राष्ट्रीय विचारों के थे, अतः वे शिक्षा पद्धति को भारतीय परम्परानुसार ढालना चाहते थे। उन्होंने शिक्षा द्वारा पुनर्जागरण का सन्देश दिया था। **यह पुनर्जागरण तीन दिशाओं की ओर उन्मुख होना चाहिए** -

1. प्राचीन आध्यात्म ज्ञान की पुनर्स्थापना,
2. इस आध्यात्म ज्ञान की दर्शन, साहित्य, कला, विज्ञान व विवेचनात्मक ज्ञान में प्रयोग,
3. वर्तमान समस्याओं का भारतीय आत्म-ज्ञान की दृष्टि से समाधान की खोज तथा आध्यात्म प्रधान समाज की स्थापना।

शिक्षा के लक्ष्य -

श्री अरविन्द के अनुसार "शिक्षा का प्रमुख लक्ष्य विकासशील आत्मा के सर्वांगीण विकास में सहायक होना तथा उसे उच्च आदर्शों के लिए प्रयोग हेतु सक्षम बनाना है।" अरविन्द जी के विचार महात्मा गांधी द्वारा प्रतिपादित शिक्षा के लक्ष्यो के समान है। अरविन्द जी की धारणा थी कि शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति में यह विश्वास जाग्रत करना है कि मानसिक तथा आत्मिक दृष्टि से पूर्ण सक्षम है तथा वह शनैः शनैः अतिमानव की स्थिति में आ रहा है। शिक्षा द्वारा व्यक्ति की अन्तर्निहित बौद्धिक एवं नैतिक क्षमताओं का सर्वोच्च विकास होना चाहिए। अरविन्द जी का विश्वास था कि मानव दैवी शक्ति से समन्वित है और शिक्षा का लक्ष्य इस चेतना शक्ति का विकास करना है। इसीलिए वे मस्तिष्क को 'छठी ज्ञानेन्द्रिय' मानते थे। शिक्षा का प्रयोजन इन छः ज्ञानेन्द्रियो का सदुपयोग करना सिखाना होना चाहिए। उन्होंने कहा था कि "मस्तिष्क का उच्चतम सीमा तक पूर्ण प्रशिक्षण होना चाहिए अन्यथा बालक अपूर्ण तथा एकांगी रह जायेगा। अतः शिक्षा का लक्ष्य मानव व्यक्तित्व के समेकित विकास हेतु अतिमानस का उपयोग करना है।"

नैतिक शिक्षा –

श्री अरविन्द जी बालक के बौद्धिक विकास के साथ उसका नैतिक एवं धार्मिक विकास भी करना चाहते थे। उनकी धारणा थी- "मानव की मानसिक प्रवृति नैतिक प्रकृति पर आधारित है। बौद्धिक शिक्षा, जो नैतिक एवं भावात्मक प्रगति से रहित हो, मानव के लिए हानिकारक है।" नैतिक शिक्षा हेतु अरविन्द गुरु की प्राचीन भारतीय परम्परा के पक्षधर थे जिसमें गुरु शिष्य का मित्र, पथ प्रदर्शक तथा सहायक हो सकता था। नैतिक "संसूचन विधि" द्वारा दी जानी चाहिए जिसमें गुरु व्यक्तिगत आदर्श अनुशासन द्वारा ही विद्यार्थियो में अच्छी आदतों का निर्माण हो सकता है। नैतिक "संसूचन विधि" द्वारा दी जानी चाहिए जिसमें गुरु व्यक्तिगत आदर्श जीवन एव प्राचीन महापुरुषों के उदाहरण द्वारा विद्यार्थियों को नैतिक विकास हेतु उत्प्रेरित करे।

निष्कर्ष -

महर्षि अरविन्द जी ने अपने जीवन में बहुत संघर्ष किया जिससे हर व्यक्ति शिक्षित हो जाये, जो देश का भविष्य बना सके। इसके पश्चात वह ग्रीक और लैटिन, संस्कृत आदि भाषाओं का ज्ञान प्राप्त कर चुके थे। अरविन्द जी ने ब्रिटिश सामान, ब्रिटिश न्यायालय और सभी ब्रिटिश चीजों के बहिष्कार का खुला समर्थन किया और लोगों को सत्याग्रह के लिए तैयार किया।

सन्दर्भ –

- कृपाकान्त, महर्षि : "विश्व के महान योगी महर्षि अरविन्द", बल्ली मारान, दिल्ली 2010
- पचौरी गिरीश : "शिक्षा के सामाजिक आधार", आर० लाल बुक डिपो, मेरठ 2008
- पचौरी गिरीश : "शिक्षा के महान शिक्षा आधार", आर० लाल बुक डिपो, मेरठ 2008
- लाल बिहारी रमन : "शैक्षिक चिन्तन एव प्रयोग", आर लाल बुक डिपो मेरठ 2012
- सिंह प्रसाद शिव : "उत्तर योगी", महात्मा गाँधी मार्ग इलाहाबाद तृतीय संस्करण 1994
  सोती, शिवेन्द्र चन्द्र : "श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन, पी. एच. डी.(शिक्षा)", मेरठ विश्वविद्यालय, 1984